ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 238-241

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

लैंगिक विभेद के परिप्रेक्ष्य में नारीवाद के विविध आयाम

डॉ0 अमित यादव

असिस्टेंट प्रो0– दर्शन शास्त्र, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर (उ0प्र0) भारत

Received-05.03.2023, Revised-11.03.2023, Accepted-16.03.2023 E-mail: amitbhuaz@gmail.com

सारांशः ***लैंगिक आधार पर पुरूष एवं स्त्री में भेद है, यह प्राकृतिक है और सृष्टि के लिए आवश्यक भी है। प्रकृति में हमें सह–अस्तित्व की विचारधारा देखने को मिलती है जिससे सृष्टि की प्रक्रिया व्यवस्थित रूप से चलती रहे। प्रकृति ने सृष्टि के ऐसे नियम स्थापित कर रखे हैं जिसमें न केवल अकेला पुरूष और ना ही स्त्री, सृष्टि में सक्षम है। अतः प्रकृति ने स्त्री और पुरूष दोनों को भिन्न व विशिष्ट बनाया हैं। उपरोक्त सहकारी प्राकृतिक जैविक सक्षमताओं के उपरांत भी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक जनजीवन में महिलाओं की स्थिति समाज में पुरूषों की अपेक्षा गौण है। महिलाओं की यह स्थिति भारत–भूमि एवं भारत के बाहर पाश्चात्य जगत में भी दृष्टव्य हैं। स्त्रियों को पुरूषों की तुलना में न्यून अधिकार, समान अवसरों का अभाव, निर्णयों में महिलाओं की नगण्य भूमिका, एक स्त्री के रूप में उनकी स्वतंत्र पहचान स्थापित करने में आने वाली समस्याएं और परिवार में महिला का साध्य के स्थान पर साधन मूल्य निर्धारित करना और कुल मिलाकर पुरूष की तुलना में महिला की गौण स्थिति होना, लैंगिक आधार पर किये जाने वाले विभेद को प्रकट करता है।***

कुंजीभूत शब्द– सह–अस्तित्व, सृष्टि, सहकारी, राजनीतिक, आर्थिक जनजीवन, न्यून अधिकार, पितृसत्तात्मक, नारीवाद।

लैंगिक विभेद जन्म से ही देखने को मिलता हैं, पुत्र के जन्म पर खुशी मनाना, सोहर गाना जबकि पुत्री के जन्म पर लोगों के चेहरे लटक जाना। यहीं नही जन्म से पहले भी भेदभाव का उदाहरण हम भ्रूण हत्या के रूप में देख सकते हैं। गैर वैधानिक होने के बावजूद होने भी गर्भस्थ शिशु का लिंग परीक्षण कर पुत्री के रूप में शिशु के होने पर गर्भपात करा देना, शिशु भ्रूण हत्या हैं। इस प्रकार एक रूढ़ी के रूप में हम स्त्रियों के प्रति समाज में गौण भाव का प्रदर्शन पाते है। वेद की ऋचाएं भी पुत्र के जन्म की कामना करती है कहीं पर भी पुत्री के जन्म की कामना देखने को नहीं मिलती है। यह अवश्य है कि नारी को देवी शक्ति आदि कहा गया लेकिन जन्म लेने की कामना या प्रार्थना नही की गयी। वस्तुतः वैदिक समाज पितृसत्तात्मक समाज रहा है जिसमें पुरूष परिवार का मुखिया था जिसे परिवार के सम्बंध में समस्त निर्णयन का अधिकार व आधिपत्य रहा। मनुस्मृति में कहा गया है कि "स्त्री को कौमार्यावस्था में पिता के अधीन, युवावस्था में पति के अधीन एवं वृद्धावस्था में पुत्रों के अधीन रहना चाहिए"[1] मध्य युग में संत तुलसीदास स्त्री को प्रताडना का पात्र घोषित करते है। "ढ़ोल गॅवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी" इसके साथ प्राचीन भारत में सति प्रथा, विधवा विवाह निषेध, बाल–विवाह आदि परंपराएं महिलाओं की समाज में दुर्गति का कारण बनी। लिंग असमानता या लैंगिक विभेद के कारणों पर दृष्टिपात करे तो जैविक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एवं धार्मिक सांस्कृतिक आधारों पर महिलाओं को पुरूषों की तुलना में कमजोर एवं इस आधार पर लैंगिक विभेद को उचित ठहराने का प्रयास किया जाता है।

पुरूषों का शरीर संगठन व क्षमता महिलाओं की अपेक्षा बेहतर सशक्त है। उपरोक्त मान्यता या मिथक महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा गौण दिखाने का एक समाजाधारित प्रयास है जबकि यदि इसका तार्किक व तथात्मक विश्लेषण करें तो हम ऐसा पाते है कि महिलाएं प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक जब भी उन्हें अवसर प्राप्त हुए है उन्होंने जीवन के सभी क्षेत्रों में अग्रणी भूमिका निभायी है। चाहे राजनीति हो, शासन प्रशासन हो, खेलकूद या सशस्त्र सेना आज हम सभी क्षेत्रों में महिलाओं की न केवल उपस्थिति बल्कि कीर्तिमान रचता हुआ पा रहे हैं। इतिहास के पन्नों में यदि हम देखे तो "रानी दुर्गावती, माता जीजाबाई, पन्ना दाई, वीरमाता, देवल देवी, पद्मिनी, रानी भवानी, ताराबाई, हाड़ी रानी आदि न जाने कितने नाम है, जिन्होंने मातृभूमि और अपनी अस्मिता की रक्षा करने में अपनी जान की परवाह नही की और युद्ध कौशल भी दिखाए तथा राजकाज की सुझबूझ भी।

भारत में अंग्रेजी राज के पैर जम जाने के बाद जो प्रथम मुक्ति–युद्ध हुआ, 1857 के उन स्वतंत्रता–सेनानियों में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, बेगम हजरतमहल, रानी तपस्विनी रानी तुलसीपुर, रानी रामगढ़, रानी जिंदा, नृत्यांगना अजीजन, जीनतमहल, नाना की पालिता बेटी मैना–जिसे फिरंगियों ने पकड़कर जीवित ही जला दिया था, फिरोजशाह की पत्नी जमानी बेगम आदि ज्ञात–अज्ञात कितनी ही स्त्रियों के नाम है, जिन्होंने अंग्रेजी शासन के विरूद्ध झण्डा बुलंद किया, पर शत्रु के सामने हार नहीं मानी।"[2]

अतः यह कहना कि शारीरिक जैविक रूप से महिलाएं निर्बल है और पुरूष सबल है यह मिथक ही कहा जा सकता है। यदि महिलाओं को पुरूषों के समान कार्य वातावरण एवं अवसरो की समानता मिले तो वह किसी भी दृष्टिकोण से पुरूषों से कमतर कदापि न रहे। यह कथन उपरोक्त संदर्भ में सटीक प्रतीत होता है कि स्त्रियॉं जन्म नहीं लेती अपितु बनाई जाती

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

है'' तात्पर्य यह है कि पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों को अवसरों की उपलब्धता प्रदान न कर उनसे आज्ञाकारी, होने खुलकर अपनी बात न रख पाने, अपने भविष्य व जीवन के निर्णय न लेने आदि को, गुणी स्त्री के रूप में चित्रित किया जाता है। ''किसी को यह शंका नहीं होगी कि पितृसत्तात्मक समाज में विवाह, कुटुंब और यौनिकता, पुरूष के द्वारा नियंत्रित और संस्थागत स्वरूप में परिचालित है।

वहॉ के अधिकारी पुरूष है, उसका काम है कि सबको पराजित करके खुद की स्थापना एवं राजत्व की स्थापना करते रहें। बाकी लोगों की स्थिति है कि वे हार मानते रहें, चाहे वे स्त्री हो, या बच्चे हों या वृद्ध माता–पिता। हराने व हारने की स्थितियों में गुजरते हुए इस संस्था की अंदरूनी वृत्तियों का पर्दाफाष किया गया तो यह साफ हो गया कि इस संस्था को चालू रखने के लिए स्वामी के अलावा सब किसी का दान, त्याग व योगदान की जरूरत है।''[3] अधिकांश महिलाओं ने इस थोपे हुए स्वरूप को चुपचाप न केवल स्वीकार कर लिया है अपितु इसका पुरजोर समर्थन भी करती दिखती है। इसे हम इस प्रकार रख सकते है कि स्त्रियों स्वयं स्त्रियों के लिए बाधक वातावरण तैयार करती है यद्यपि कि जैविक आधार पर स्त्री पुरूषों में भेद की बात को फाईटर प्लेन, रेलगाड़ी, जे0सी0बी.0, मिसाईल बनाने व चलाने में सक्षम महिलाओं ने चुनौती दे डाला हैं।

आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं को दमदार उपस्थिति जैविक आधार पर लैंगिक विभेद को मिथक साबित करती हैं। स्त्रियों के प्रति सामाजिक मनोविज्ञान भी लैंगिक विभेद का एक बड़ा कारण है। अस्तित्ववादी चिंतकों का मत है कि पुरूष जहॉ स्वतः सत् (Being for itself) के रूप में माना गया वही स्त्रियॉ अन्य या वस्तु के रूप (Being in itself) में देखी जाती है। सिमोन द बोउवा ने अपनी पुस्तक The Second Sex में लिंग विभेद का कारण मनोवैज्ञानिक एवं अस्तित्व परक माना। बोउवा का कथन है कि समाज में पुरूष अपने को 'स्वतः सत् (Being for itself) मानता है और स्त्री को 'अन्य'(Other) के रूप में, 'वस्तु' (Object) के रूप में स्वीकार करता है। तात्पर्य यह है कि पुरूष स्त्री की चेतन सत्ता को अस्वीकार करके उसे अपने लिए वस्तु के रूप में स्वीकार करता है। बोउवा के अनुसार इसका सर्वाधिक आश्चर्यजनक पहलू यह है कि स्त्रियों ने अपने विषय में पुरूषों के इस मूल्यांकन को स्वीकार कर लिया इस प्रकार लिंग–विभेद का कारण पुरूष द्वारा स्त्री को सम्पत्ति के रूप में, भोग्य वस्तु के रूप में ग्रहण करना है। बोउवा का कथन है कि स्त्रियों की यह स्थिति इसलिए भी बनी है कि वे कभी–भी एक इकाई के रूप में संगठित नहीं रही है।''[4]

बाल्यकाल से ही लड़कियों की शिक्षा दीक्षा इस प्रकार की जाती है जैसे वह पुरूष के बिना कुछ नही है। इस मान्यता को प्राचीन काल से बढ़ावा दिया जाता रहा जो एक परंपरागत रूढ़ी के रूप में स्थापित हुई। दार्शनिक चिंतन में भी ऐसे विचार देखने को मिलते है जिसमें स्त्रियों को पुरूषों की अपेक्षा निम्न दशा में वर्णित किया गया है ''ग्रीक दार्शनिक प्लेटो को पुरूष होने पर गर्व है वह दो बातो के लिए ईश्वर का धन्यवाद करते है कि प्रथम उसने उन्हें स्वतंत्र पैदा किया द्वितीय उसने उसे पुरूष रूप में उत्पन्न किया। अरस्तू कहते है कि एक स्त्री कुछ निश्चित गुणों के अभाव के कारण स्त्री है। जर्मन चिंतक नीत्शे जब लोकतंत्र को नारीतंत्र कहता है तो एक स्त्री के प्रति उसके मनोभाव प्रकट होते हैं। मनोवैज्ञानिक फ्रायड कहता है कि स्त्रियों में न्याय बुद्धि अपेक्षाकृत कम पायी जाती है इसी अभाव के कारण उसमें ईर्ष्या भाव का संचार होने लगता है।''[5] इस प्रकार हम देखते है कि एक पूरा मनोवैज्ञानिक स्त्रियों को पुरूशों की अपेक्षा पिछड़ा, न्यून, कम समझदार कमजोर साबित करने में लगा हुआ है, जिससे लैंगिक विभेद को बढ़ावा मिलता है।

धार्मिक जीवन में भी लैंगिक विभेद देखने को मिलता है। मंदिरों एवं अन्य धर्मो के पूजा स्थलों पर महिलाओं के लिए निर्बंधन, पुजारी के रूप में स्त्री की पद स्थापना की अस्वीकार्यता। धार्मिक आधार पर विभिन्न प्रकार की सीमाएं चाहे वह पहनावे को लेकर हो अथवा जीवन के संदर्भ में लिए जाने वाले निर्णय सभी में एक विभेदकारी दृष्टि देखने को मिलती है। इस विभेदकारी दृष्टि को धार्मिक गुरूओं द्वारा बढ़ावा भी दिया जाता है। आर्थिक आधार पर भी महिलाओं के साथ विभेदकारी व्यवहार देखने को मिलता हैं। आज भी समान कार्य के लिए समान वेतन पाना महिलाओं के लिए टेढ़ी खीर है। महिलाओं द्वारा घर को चलाने और सेवा सम्बंधी कार्य का कोई मोल नहीं समझा जाता, अपितु यह उनका कर्त्तव्य है कि वह गृह व उसके अन्तर्गत सेवा कार्य पूर्ण मनोयोग से करें।

विवाह के उपरांत स्त्री का कोई घर नहीं रह जाता, यह एक अत्यंत पीड़ादायक स्थिति है। ससुराल की संपत्ति पुरूष की हो जाती है। यद्यपि कि संपत्ति का अधिकार उसे पिता के घर में मिलता है, लेकिन वही पुत्री अच्छी मानी जाती है, जो उसका दावा न करें। इस प्रकार हमने देखा कि किन–किन आधारों पर लैंगिक विभेद किया जाता रहा है। भाषा के स्तर पर यदि हम देखे तो जितने भी उच्च एवं कुलीन पद है। वह पुलिंग में है जैसे राष्ट्रपति, राज्यपाल, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री आदि दूसरी तरफ जितने अपशब्द है उसमें स्त्रीलिंग जुड़ा हुआ है। खेलों की प्रतिस्पर्धा में भी स्त्री पुरूष के मध्य पुरस्कार राशि की भिन्नता देखने को मिलती है। राजनैतिक जीवन में स्त्रियों का प्रवेश न के बराबर ही कहा जा सकता है। यद्यपि कि स्थानीय निकाय एवं पंचायत स्तर पर महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित है तथापि "प्रधानपति" की अवधारणा वहॉ भी प्रबल है। लोक सभा एवं

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

विधान सभा में स्त्रियों के लिए आरक्षण अभी भी नही किया जा सका।

लैंगिक विभेद को समाप्त करने और स्त्रियों को साधन मूल्य से उठाकर साध्य मूल्य के रूप में स्थापित करने का प्रयास एक लम्बे अर्से से चला आ रहा है। आज समाज में स्त्रियों की दशा में परिवर्तन आया है जिसके लिए विभिन्न चिंतकों समाज सुधारकों ने दीर्घकालीन प्रयास किये। भारतीय और पाश्चात्य समाज में यह प्रयास किये गये। नारी मुक्ति आंदोलन, अस्तित्ववादी नारीवाद, मार्क्सवादी नारीवाद, पर्यावरणवादी नारीवाद, पारिस्थतिकी नारीवाद, जैसी अवधारणाएं एवं आंदोलन लैंगिक विभेद को समाप्त करने के उद्देश्य से आए।

भारतीय परिदृश्य में सावित्रि बाई फूले, ज्योतिबाफूले, डॉ0 भीमराव अंबेडकर, महात्मा गॉधी, ईश्वरचंद विद्यासागर, राजा राममोहन राय, जैसे अनेक महापुरूषों ने स्त्रियों के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार को समाप्त करने एवं उनके लिए समान अवसरों की उपलब्धता के लिए वैचारिक एवं व्यवहारिक दोनों स्तरों पर सघन प्रयास किये।

वर्तमान समय में कानूनी स्तर पर विभिन्न प्रकार के संरक्षात्मक संरचनात्मक विधियॉ बनाई गयी है जिससे स्त्री जीवन में सुधार आ सके। चाहे विवाह संबंधी अधिनियम हो, घरेलू हिंसा निषेध अधिनियम हो, विवाह विच्छेद होने पर गुजारा–भत्ता संबंधी अधिनियम हो सभी के द्वारा स्त्रियों को संरक्षित करने और संबल बनाने का प्रयास किया जा रहा है। इस प्रयासों से स्त्रियों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन भी देखने को मिल रहा है। स्त्रियॉ पूर्व की अपेक्षा एक सुरक्षित व मजबूत विधिक ढ़ाचे में ज्यादा बेहतर स्थिति में है। सूचना व संचार तकनीक ने भी स्त्री को सामाजिक व आर्थिक आधार पर मजबूत करने में सहयोग दिया है, लेकिन समस्या मूलतः मनोवृत्ति की है, जब तक समाज में स्त्रियों के प्रति सहकारी समानता आधारित मनोवृत्ति नहीं होगी तब तक विभेदकारी परिस्थितियां बनती रहेंगी।

वस्तुतः पितृसत्तात्मक समाज में विवाह, परिवार और यौनिकता पुरूष के द्वारा नियंत्रित और संस्थागत रूप से संचालित की जाती है। पितृसत्तात्मक समाज का मुखिया पुरूष के आगे परिवार के अन्य सदस्यों की स्थिति गौण रहती है जिससे निर्णयन में परिवार का पुरूष मुखिया अभिभावी रहता हैं, ऐसी स्थितियों को अपने बारे में निर्णय लेने में कमजोर व अक्षम बनाती है। ''लिंग नीति और यौन नीति को लेकर समाज में पूर्वधारणाएं जबरदस्त फैली मिलती है। इस बंद समाज को खोलकर उसी में सहजीवन के रास्ते ढूढ़ने है।''[6] इस प्रकार परिवार के अंदर जब तक स्त्री को निर्णय करने में सक्षम नही बनाया जाएगा वह बाहरी दुनिया का सामना नहीं कर पाएगी। पितृसत्तात्मक समाज में घरेलू हिंसा आज भी एक सच है जो देखने को मिलता रहता है।

''एक बाक्सिंग बैग समझकर मालिक या पति–परमेष्वर औरत पर बाहर का गुस्सा भी अक्सर निकाल देते है। प्रतिवाद में औरत कुछ देर रूठी रहती है भूखी प्यासी, इंतजार करती हुई कि कोई माफी मॉगने आए, पर अक्सर इस मौन पर प्रतिकार पर ध्यान नही दिया जाता, क्योकि काम तो चलते ही रहते है। सिर झुकाकर औरतें काम तो किए ही जाती है। बाल बच्चों का मोह, बाहर की दुनिया के और खतरनाक होने की चिंता, लोक–लाज, मायके वालों की तकलीफ और अपनी साधन हीनता ये पॉच मुख्य कारण है, जो औरत को बात सड़क पर या अदालत तक लाने से रोक देते है।''[7] अतः यह समझा जाना चाहिए, कि कानून बना देना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु उसके साथ–साथ स्त्रियों की दशा में सुधार लाने हेतु अन्य सकारात्मक प्रयास भी किये जाना आवश्यक है।

स्त्रियों को बराबरी में लाने के लिए समाज में पुरूषों का सहयोग व सकारात्मक, सहअस्तित्ववादी वातावरण आवश्यक है। यह वातावरण परिवार के अंदर सर्वप्रथम मिलना चाहिए। ''हम लड़कियों, को हॅसने–खिलखिलाने और धमा–चौकड़ी मचाने का मौका दे, न कि उदासी के बोझ तले दबाकर उन्हे मार दें। काश कि हमारी यह तमन्ना पूरी हो।''[8] इसके साथ ही साथ महिलाओं को वैज्ञानिक तार्किक ढ़ंग से जीवन जीने हेतु आगे बढ़ना होगा बहुत सी ऐसी परंपराएं और मिथक जो उसकी स्थिति को कमजोर बनाती है को तोड़ना छोड़ना होगा ''गॉव–गॉव में फैले अनगिनत अंधविश्वास ही तो है कि औरतों पर भूत चूडैल, पीर, फकीर या बैठते है।''[9] इस प्रकार के अंधविश्वासों को छोड़ना होगा तभी स्त्री का उद्धार होगा।

वर्तमान युग में स्त्रियों ने अपने जीवन संघर्षो से अनेक मुकाम हासिल किये है। वस्तुतः ''नारित्व, जिसका अपना एक पृथक अस्तित्व हो, अपनी एक छवि हो, अपना एक अहम् हो गौरव हो, अपना स्वाभिमान, अपनी उपयोगिता अपनी सार्थकता हो। जो न पुरूष से हीन मानी जाए, न पुरूष की बराबरी में अपनी क्षमताओं का अपव्यय करे। जो पुरूष की पूरक हो। उसकी प्रेरणा हो। उसकी मार्गदर्शन करने वाली हो।

उसकी सहयोगी हो–घर, बाहर, सभी जगह, सभी क्षेत्रों में''[10] यह प्रत्याशा ऐसी नही है जो कुछ समाजार्थिक चिंतक मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक मिलकर नियम गढ़कर समाज पर लागू कर दें और समाज उसे तत्काल अपनी स्वीकृति दे दे। यह दीर्घकार्लिक सकारात्मक प्रयासो द्वारा ही संभव है। प्रसन्नता की बात यह है कि समाज धीरे ही सही, लेकिन उस तरफ क्रमिक रूप से आगे बढ़ रहा है, जहॉ स्त्रियों को निर्णयन क्षमता, सेवाओं में अवसरों की उपलब्धता, सफलता और अन्य स्त्रियों को

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

देखकर दूसरी स्त्रियों में स्वावलंबन का भाव आ रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह शिवभानु, सामाजिक–राजनीतिक दर्शन की रूपरेखा, प्रकाशन–अभिमन्यु प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2004 पृष्ठ–265.
2. व्होरा आशारानी, औरत कल, आज और कल, प्रकाशन–कल्याणी शिक्षा परिषद्, संस्करण 2011 पृष्ठ 18.
3. प्रमीला के0पी0, स्त्री अस्मिता और समकालीन कविता, प्रकाशन–सामयिक बुक्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011, पृ0 118.
4. सिंह शिवभानु, सामाजिक–राजनीतिक दर्शन की रूपरेखा, प्रकाशन–अभिमन्यु प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2004 पृष्ठ–266.
5. सिंह शिवभानु, सामाजिक–राजनीतिक दर्शन की रूपरेखा, प्रकाशन–अभिमन्यु प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2004 पृष्ठ–267.
6. प्रमीला के0पी0, स्त्री अस्मिता और समकालीन कविता, प्रकाशन–सामयिक बुक्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011, पृ0 121.
7. अनामिका, मन मांझने की जरूरत, प्रकाशन– सामयिक प्रकाशन, संस्करण 2018, पृष्ठ 122.
8. शर्मा क्षमा, समकालीन स्त्री विमर्श प्रकाशन– सामयिक प्रकाशन, संस्करण 2018, पृष्ठ 13.
9. शर्मा क्षमा, समकालीन स्त्री विमर्श प्रकाशन– सामयिक प्रकाशन, संस्करण 2018, पृष्ठ 20.
10. व्होरा आशारानी, औरत कल, आज और कल, प्रकाशन–कल्याणी शिक्षा परिषद्, संस्करण 2011 पृष्ठ 189.

*****